शोध मंथन, 2018 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X, Impact Factor 3.8942 (ICRJIFR)
UGC Approved Journal No. 40908

हिमाचल प्रदेश का पारम्परिक लोक गायन जत्ती

आचार्य परमानन्द बंसल* & डॉ० पुष्पा चौहान**

**संगीत विभाग, हि०प्र० विश्वविद्यालय, शिमला*

***Guest Faculty, Deptt. of Music vocal, PGGCG., Sector-11, Chndigarh*

सारांश

हिमाचल प्रदेश अपनी बहुरंगी सांस्कृतिक व सांगीतिक परम्पराओं की बहुमूल्य धरोहर के कारण विख्यात है। प्रदेश के 12 जनपदों में अलग–अलग संस्कृति का अनवरत विस्तार हुआ है। इनके अनवरत समावेश से यहां की संस्कृति अनुपम निधि के रुप में हमारे समक्ष है। यहां अनेक लोक गीत शैलियां व लोक गीतों के निबद्ध और अनिबद्ध प्रकार प्रचलित है; जिनमें लोका, बामणा रा छोरु, झूरी, लामण, गंगी, ठामरु, बींची, माल, एंचली, कुंजड़ी मल्हार, मुसाधा, नाटी आदि–आदि राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रदेश का प्रतिनिधित्व करते है। जहां एक ओर भौगोलिक व भाषाई विविधता के कारण सांस्कृतिक परम्पराओं की अकल्पनीय झलक यहां की जीवन शैली से साक्षात करवाती है वहीं पर पर्व, त्यौहार, मेले, उत्सवों के आयोजनों से जुड़े अनेक मिथक, दंत कथाएं, यहां की संस्कृति में देखने को मिलती है। ये दंत कथाएं कितनी सत्य व गलत है इस बारे में प्रमाणों सहित कुछ नहीं कहा जा सकता। पग–पग पर देवी देवताओं के स्थलों (थापने या थान) पर जनमानस की अगाध श्रद्धा जहां लोक मानस को व्यवस्थित जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते है वहीं पर इन देवी देवताओं का भय इन्हें व्यभिचारी जीवन जीने से भी रोकता है। सर्वेक्षण ज़िला मण्डी के करसोग क्षेत्र में शिवरात्री के समय शैव परम्परा के जो धार्मिक गीत गाए जाते हैं उन्हें जत्ती गीत कहा जाता है। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि जत्ती गीत मण्डी के अतिरिक्त चम्बा, कुल्लू, सोलन, शिमला के क्षेत्रों में भी गाए जाते है परन्तु वहां इन गीतों को अलग–अलग नामों से जाना जाता है। चम्बा में ऐंचली, शिमला व सोलन में आंचली गीत जती गीतों के सदृश्य परिलक्षित होते हैं। यह गायन परम्परा अत्यन्त प्राचीन व लोक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्धित रही है।

मूल शब्द

जती सन्यासी, धर्म पुरुष धी–ध्याण ब्याही हुई बेटी।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

आचार्य परमानन्द बंसल*& डॉ० पुष्पा चौहान**

हिमाचल प्रदेश का पारम्परिक लोक गायन जत्ती

शोध मंथन, मार्च 2018,
पेज सं0 61–66

Article No. 9
http://anubooks.com
?page_id=581

हिमचाल प्रदेश का पारम्परिक लोक गायन जत्ती

आचार्य परमानन्द बंसल & डॉ० पुष्पा चौहान***

किसी भी युग की सभ्यता एवं संस्कृति के उत्कर्ष का अनुमान उस युग में संगीत की समृद्धि से लगाया जा सकता है। संगीत मनुष्य के जीवन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है फिर चाहे वह लोक संगीत हो या शास्त्रीय संगीत। संगीत एक ऐसी आकर्षक कला है जो आदि काल से अध्यात्म की पृष्ठ भूमि पर अंकुरित होकर एक लम्बी यात्रा तय करते हुए शुद्ध, पवित्र सरिता की भांति निरन्तर प्रवाहमान है। यह कहना उचित है कि जब आदि मानव को भाषा का उचित प्रयोग करना नहीं आया था, संगीत का अस्तित्व तभी से रहा है। हड़प्पा के उत्खननों में प्राप्त नृत्यरत, वाद्य–वादन व गायन मुद्राओं में प्राप्त खण्डित मूर्तियां इस साक्ष्य को प्रमाणित करती है कि संगीत तत्कालीन समाज की जीवन शैली में व्यवहारित रहा होगा अर्थात ऐसी मूर्तियों का निर्माण संगीत प्रिय सभ्यता के अर्न्तगत ही हो सकता है।

शास्त्रों के अनुसार हमारे यहां 64 कलाएँ मानी जाती हैं। इनमें संगीत सबसे जनप्रिय व हृदय को तत्काल प्रभावित करने वाली कला और सृष्टि के समान आदि व अनन्त है। निरन्तर जीवित रहने वाली यह कला भारतीय संस्कृति व जीवन प्रणाली का अभिन्न अंग है। वेद, पुराणों में वर्णित है कि सृष्टि रचना का कारण नाद, नाद से ओउम् और ओउम सृष्टि के कण–कण में विद्यमान है।

शास्त्रों में वर्णित उतराखण्ड जहां पर ऋषि–मुनियों ने शंकर भगवान एवं ईश्वर की कठिन तपस्या कर के मनचाहा वर अथवा शाप देने की क्षमता पाई, जहां पर पाण्डवों ने अज्ञात वास में भ्रमण किया, जो महर्षि व्यास, जमदाग्नि, विशिष्ट, मार्कण्डेय तथा परशुराम जैसे मुनियों द्वारा तपस्या करने के लिए रमणीक स्थान रहा, जहां के प्रत्येक मानव के शरीर में नृत्य की थिरकन है, लोच है, कण्ठ में गान है जहां पर दुन्दभी, ढोल, तुरही, करनाल, शहनाई अपने मधुर स्वरों की ध्वनि से पहाड़ों को गुंजित करते है, यही है स्वतन्त्रता के बाद का छोटी–बड़ी रियासतों के एकीकरण से उद्घाटित 12 जनपदों का हिमाचल प्रदेश। हिमाचल रुपी इस विशाल सागर की खोज करने की अपार सम्भावनाएं यहां उपलब्ध हैं। इसी प्रकार यदि यहां की कला संस्कृति की ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखा जाए तो बहुत सी प्राचीनतम् जानकारी प्राप्त हो सकती है और कला संस्कृति सम्बन्धी असंख्य ग्रंथ लिखे जा सकते हैं। हिमाचल प्रदेश अपनी बहुरंगी सांस्कृतिक व सांगीतिक परम्पराओं की बहुमूल्य धरोहर के कारण विख्यात है। प्रदेश के 12 जनपदों में अलग–अलग संस्कृति का अनवरत विस्तार हुआ है। इनके अनवरत समावेश से यहां की संस्कृति अनुपम निधि के रुप में हमारे समक्ष है। यहां अनेक लोक गीत शैलियां व लोक गीतों के निबद्ध और अनिबद्ध प्रकार प्रचलित हैं। जिनमें लोका, बामणा रा छोरु, झूरी, लामण, गंगी, ठामरु, बींची, माल, एंचली, कुंजड़ी मल्हार, मुसाधा, नाटी आदि–आदि राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रदेश का प्रतिनिधित्व करते हैं। जहां एक ओर भौगोलिक व भाषाई विविधता के कारण सांस्कृतिक परम्पराओं की अकल्पनीय झलक यहां की जीवन शैली से साक्षात करवाती है वहीं पर पर्व, त्यौहार, मेले, उत्सवों के आयोजनों से जुड़े अनेक मिथक, दंत कथाएं, यहां की संस्कृति में देखने को मिलती हैं। ये दंत कथाएं कितनी सत्य व गलत हैं इस बारे में प्रमाणों सहित कुछ नही कहा जा सकता। पग–पग पर देवी देवताओं के स्थलों (थापने या थान) पर जनमानस की अगाध श्रद्धा जहां लोक मानस को व्यवस्थित जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते हैं वहीं पर इन देवी देवताओं का भय इन्हें व्यभिचारी जीवन जीने से भी रोकता है। कुल देवता, ग्राम देवता, क्षेत्र देवता की संस्तुति से ज्ञात होता है कि

यद्यपि जती गायन की उत्पति के विषय में मुख्य तीन मत है तथापि सभी मतानुयायी जत्ती गायन की उत्पति व स्त्रोत भगवान से व भगवान की विभिन्न लीलाओं को मानते है। लोकमानस इन देवी देवताओं से बेहिचक सम्वाद करते है। अन्न–धन–दूध–पूत (चारों पदार्थ) में देवता का हिस्सा अनिवार्यत देव स्थलों पर अर्पित किया जाता है। सार रुप में हिमाचल वासियों का लोक जीवन धर्म की सुदृढ़ नींव पर ढला है। धर्म इनके जीवन का बल और सम्बल है। यहाँ की लोक कलाओं में कहीं न कहीं कोई न कोई धर्म का तत्व अवश्य मिलता है। अपने आँचल में लोक संगीत का अनमोल खज़ाना समेटे हिमाचल की मनोरम वादियां सदैव ही अपनी कला एवं विविध सांस्कृतिक शैलियों के कारण विश्व विख्यात रही है। लोक वाद्यों से निकलते मनमोहक स्वर जहां चलते पथिक के पगों को विराम लगा देते है वहीं लोक गायक प्राचीन विरासत को अपने वंशजो के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित कर लोक गायन शैलियों के परचम को फहराए हुए हैं। लोक संगीत की इस सरस रस धारा में मण्डी जनपद में प्रचलित भक्ति रस से ओत–प्रोत जत्ती गायन परम्परा की शिवरात्री के अवसर पर विशेष धूम रहती है।

जत्ती

जती शब्द संस्कृत के ''यति'' से लिया गया प्रतीत होता है जिसका अर्थ है योगी। हिन्दी शब्द कोश में जती व यति दोनों शब्दों को समानार्थी बतलाया गया है। दोनों का अभिप्राय जितेद्रिय, सन्यासी, धर्म पुरुष व सन्यास से सम्बन्धित है। लोकाचरणानुसार जो ऋषि भगवान शिव की स्तुति करते हुए समस्त देवों की भक्ति करे उसे यति कहा गया है। शिवपुराण में भी ऋषि मुनियों के लिए यति शब्द का उल्लेख मिलता है। लोकमान्यता है कि भगवान राम के चौदह वर्ष के वनवास के समय लक्ष्मण ने पूरे वनवास काल में भक्ति स्वरुप पलक तक नहीं झपकी थी। लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला ने भी 14 वर्षों तक लक्ष्मण के आगमन की प्रतिक्षा करते हुए कठोर भक्ति और तपस्या की थी। इसी भक्ति की गहनता को यति कहा गया है। कालान्तर में ग्रामीण पर्वतों, देवायों में रहने वाले संत–महात्माओं रिद्ध–सिद्ध ऋषि मुनियों के बाद जब ग्राम्य जन अपने आराध्य देवों की आराधना में गेय इन भक्ति गाथाओं का ग्रामीण भाषाओं में बखान करने लगें तो यह यति शब्द अपभ्रंश होकर जती कहलाया और प्राचीन समय से आज तक प्रचारित रहा।

कुछ मतावलम्बी क्षेत्रीय भाषा की दृष्टि से जत्ती शब्द को जद्दी का अपभ्रंश मानते हैं। वे जद्दी का अर्थ पुरातन मूल सम्पदा (सम्पति) मूल या प्राचीन से लेते हैं अर्थात् प्राचीन से चली आ रही परम्परा जद्दी है। जो समय प्रवाह के साथ बदल कर जत्ती नाम से जानी जाने लगी है। सर्वेक्षण ज़िला मण्डी के करसोग क्षेत्र में शिवरात्री के समय शैव परम्परा के जो धार्मिक गीत गाए जाते है उन्हे जत्ती गीत कहा जाता है। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि जत्ती गीत मण्डी के अतिरिक्त चम्बा, कुल्लू, सोलन, शिमला के क्षेत्रों में भी गाए जाते है परन्तु वहां इन गीतों को अलग–अलग नामों से जाना जाता है। चम्बा में ऐंचली, शिमला व सोलन में आंचली गीत जती गीतों के सदृश्य परिलक्षित होते है। यह गायन परम्परा अत्यन्त प्राचीन व लोक जीवन से घनिश्ठ सम्बन्धित रही है।

प्रथम मत के अनुयायियों का कहना है कि जत्ती गायन परम्परा भगवान श्री राम से हुई। जब भगवान श्री राम वनवास के लिए जा रहे थे तो अयोध्यावासी विलाप करते हुए रानी कैकयी को कोसने

लगे। सभी दुखीजनों की दुर्दशा को गाकर सुनाने लगे। आगे चलकर यही गीत जब क्षेत्रीय भाषाओं में विस्तार पाने लगे तो इन्हें ''जत्ती'' गीत कहा गया। लोक मान्यतानुसार जब राम लंका पर चढ़ाई करने वाले थे तो उन्होंने लक्ष्मण को बुलाकर कहा कि किसी श्रेष्ठ पंडित को बुलाया जाए लंका पर चढ़ाई करने के लिए सही मुहूर्त निकालना है। दन्त कथानुसार साही देव ब्राह्मण को बुलाया गया और उसने युद्ध के लिए सही मुहूर्त के बारे में जो कुछ कहा गीत की निम्न पंक्तियों में दृश्टव्य है

शादे वे आणे हेरा साहे देवा पण्डता
हेरे वे पण्डता पतरा सांचा लंका लै जुद्ध जुडाणा वै
पहला जुद्ध जुड़ा हनुमाने नफरा, लंका जुड़ा राक्षा लै
दुजा जुद्ध जुड़ा लक्ष्मणा जतीया, लंका जुड़ा मेघ वै नाथा लै
तीजा जुद्ध जुड़ा रामाचन्द्रा, लंका जुड़ा दशी सिरे राजै लै।

उपरोक्त पंक्तियों में वर्णित है कि राम जी पंडित को युद्ध मुहूर्त निकालने को कहते हैं। पंडित कहता है ''हे प्रभु प्रथम युद्ध हनुमान सेवक व राक्षसों का, दूसरा युद्ध लक्ष्मण योगी व मेघनाथ तथा तीसरा युद्ध रामचन्द्र व दस सिर वाले का होगा जिसमें विजय रामचन्द्र की होगी। आज भी रामायण के प्रत्येक प्रसंग का क्षेत्रीय भाषा में रामचन्द्र की जत्ती के रुप में गायन होता है।

दूसरे मत के अनुसार जत्ती गीतों की उत्पति श्री कृष्ण जन्म से मानी जाती है। श्री कृष्ण के जन्म के बाद वासुदेव श्री कृष्ण को कंस के भय से गोकुल में छोड़ देते है। उनके जन्म का समाचार तीनों लोकों में फैल जाता है। भगवान शंकर पार्वती से कहते है कि मै भगवान के दर्षन करने गोकुल जाता हूँ। गोकुल में चारों ओर खुशी का वातावरण है। गोकुल वासी कृष्ण जन्म की खुशी में गीत गाने लगे और भगवान शिव नृत्य करने लगे। जत्ती गायन की निम्न पंक्तियां इस ओर स्पष्ट संकेत करती हैं

द्वारे नंदो रे शिवजिए नाद बजाया–2
नंद महल ते आई नन्द राणी
मोतिए थाल सजाया
जा जोगी तू जा घर आपणे
तैं मेरा बालक डराया
शिवजिए नाद बजाया
क्या करनी तेरी दौलत दुनिया
क्या करनी तेरी माया
पुत आपणे रा दर्श कराई दे
लाल आपणे रा दर्श कराई दे
शिव दर्शन को आया शिवजिए नाद बजाया

भावार्थ

नंद महल में जैसे ही शिवजी ने नाद बजाया, नंद महल से नंद रानी मोतियों का थाल अर्पित करते हुए कहती हैं कि हे योगी! तुम अपने घर चले जाओ, तेरी उपस्थिति से मेरा नन्हा बालक भयभीत हो रहा है। प्रत्युतर में शिवजी मोतियों की ओर ईशारा करते हुए कहते हैं कि मैं तो जत्ती हूँ मुझे इस

दौलत, दुनिया व माया से क्या लेना देना। अपने लाल के दर्शन करवा दो, मैं तो केवल और केवल श्री कृष्ण के दर्शन करने आया हूँ।

उस समय के इन गीतों को ही वर्तमान समय में कृष्ण लीलाओं से जोड़कर कृष्ण की जती कहा जाता है।

तीसरे मत के अनुयायी जत्ती की उत्पति भगवान शंकर से मानते हैं। माता सती ने पार्वती के रुप में जन्म लिया। भगवान शंकर के विवाहोत्सव में जो गीत गाए गए उन्हें जत्ती गीत कहा गया। जिस प्रकार दीपावली भगवान राम के अयोध्या लौटने की खुशी में मनाई जाती है उसी प्रकार शिवरात्री भी शिव–पार्वती के विवाह के उपलक्ष्य में मनाई जाती है। एक सीमा तक यह मानना उचित है कि जत्ती गायन की विषय वस्तु भगवान शिव की क्रिड़ाओं से जुड़ी है। इसका प्रथम कारण है कि जत्ती का शाब्दिक अर्थ योगी होता है और भगवान शंकर योगी है। युगों तक वे समाधि में लीन रहते हैं। दूसरा कारण यह भी है कि जत्ती गायन शिवरात्री में होता है। तीसरा कारण यह है कि जत्ती गायन मुख्यतः शिव पार्वती के विवाह से शुरु होकर सभी क्रिड़ाओं और घटनाओं का वर्णन करता हुआ समाप्त होता है। शिव लीला से सम्बन्धित इन जत्ती गीतों को शिवजी की जती कहा जाता है इसमें शिवजी को ''सैंई'' के नाम से पुकारा जाता है।

जत्ती गायक मोती राम के अनुसार एक बार पार्वती व शिवजी में तकरार हो जाती है। भगवान शंकर पार्वती को छोड़कर चले गए। बारह वर्षों तक उनका कोई अता–पता नही चला तो लोगों ने उन्हें मृत जानकर उनकी तेहरवीं (क्रिया) का आयोजन किया। उसी समय भगवान शंकर वहां प्रकट हो गए तथा तेहरवीं की सामग्री को शिवरात्री पूजा मण्डप में परिवर्तित कर दिया। ऐसी मान्यता है कि उसी दिन से शिवरात्री मनाई जाने लगी। निम्न जत्ती गायन इस ओर संकेत करता है।

सैंये पोरो राजा वे पाओणा आया, सैंय राजा भाड़े पाओणा आया। सदा शिवा लै महारे अरघ देणा, पार्वती ले वै कलश लाणा। न्यूड़ी सेरै फूले म्हारै कामटे डाड़े चुगें बीणेया आणे म्हारे करंड़ो भरे। न्यूड़ी सेरै फूले म्हारै पाज़ै रे डाड़े चुगें बीणेया आणे म्हारे करंडो भरे। पहली बार शिवरात्री किसने मनाई इस सन्दर्भ में लोक व्यवहार में प्रचलित जत्ती का वर्णन पहले शवात्रा कूणी पुरुशे लाए गौ पहले शवात्रा बौणे लाए गुआलूए किजुरा मण्डला किजुरा दिया गौ काऊणी रा मण्डला जोखटी रा दिया गौ अर्थात पहली शिवरात्री जंगल में वालों ने मनाई और उस समय मण्डल (पूजा मण्डप) काऊणी (अनाज की एक किस्म) का तथा दीये (दीपक) जोखटी (चीड़ की बिरोज़ायुक्त लकड़ी) के बनाए। शिवरात्री का त्यौहार न केवल हिमाचल प्रदेश अपितु भारत वर्ष के कोने–कोने में मनाया जाता है परन्तु शिमला, मण्डी, कुल्लू, किन्नौर जनपदों के ऊपरी सीमावर्ती क्षेत्रों में शिवरात्री को मनाने का अपना एक अलग ढंग है। सभी वर्गों के लोग बड़ी भक्ति व श्रद्धा भाव से शिवरात्री के लिए वर्ष भर बचत करते है। एक महीना पहले ही तैयारियों में जुट जाते हैं। जत्ती गायन भी एक माह पूर्व आरम्भ हो जाता है। गाँव के लोग एक दूसरे के घरों में जाकर अपने प्राचीन वाद्य यन्त्रो के साथ गायन, वादन व नृत्य करते है। सभी अपने–अपने घरों में जती गायन करवाना शुभ मानते हैं और अनिवार्यतः जत्ती गायन करवाते है। जब तक सभी घरों में जती गायन पूरा नही हो जाता तब तक (करीब महाशिवरात्री तक) इसी तरह जत्ती गायन चलता रहता है। लोगों का मानना है कि शिवरात्री के दिन भगवान शिव का विवाह हुआ सभी ग्रामीण लोगों ने

अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए विवाह गीत गाए।

कुपुओं की एक माला भांग की छाल की रस्सी के साथ तैयार की जाती है। उसमें विषम संख्या में कुप्पु गूंथे जाते हैं। प्रत्येक कुप्पु से पहले काले बकरे या भेड़ की ऊन लगाई जाती है। प्रत्येक कुप्पु के पश्चात् पाजे के पत्ते, कुश और पीले फूल लगाए जाते हैं। कुपुओं की इसी माला को ''च्दो'' कहते हैं। इस च्दो को भगवान शंकर के अग्नि स्तम्भ के रुप में माना जाता है। लोक मान्यता है कि इसी अग्नि स्तम्भ में भगवान शंकर प्रकट होते है।

भगवान शंकर की पूजा के लिए मण्डल तैयार किया जाता हैं। यह मण्डल चावल से एक हाथ (डेढ़ फुट) लम्बा चौड़ा वर्गाकार बनाया जाता है। इसके अन्दर नौ विभाग बनाए जाते हैं। प्रत्येक विभाग में कुल देवता, ग्राम देवता, स्थान देवता आदि समस्त देवताओं का वास माना जाता है। यह मण्डल घर के किसी एक कमरे में दाहिने कोने में स्थापित किया जाता है। इस मण्डल के मध्य भाग में माश के दाने रखकर ऊपर एक कुप्पु स्थापित किया जाता है जिसे ईष्र कहा जाता है। च्दो का एक सिरा कील के सहारे छत से लटकाया जाता है और दूसरा सिरा चावल के उपर रखे ईष्र से टकराता है। मण्डल के पीछे की ओर तीन रोट स्थापित किए जाते हैं तथा मण्डल के तीन किनारों में बावरु रखे जाते हैं। पानी का कलश व सिंजिया (बड़ा दीया) चावलों के ढेरों पर स्थापित किया जाता है। सिंजिए को पूरी रात जलाए रखा जाता है इसलिए परिवार का सदस्य इसके पास पूरी रात बैठा होता है ताकि वह समय–समय पर इसमें तेल डालता रहे। मण्डल को सजाने के लिए इसके विभागों में आटे के बकरे भल्ले, बावरु, बकरे का कलेजा व मुण्डी स्थापित की जाती है। दीवार पर भगवान शंकर की तस्वीर लगाई जाती है। घर का मुखिया धोती लगाकर धूप, दीप, नैवैध अर्पित कर सर्वप्रथम महादेव की पूजा करता है और अपना व्रत तोड़ता है। मुखिया के बाद ही परिवार के अन्य सदस्य महादेव की पूजा करते है। खाना खाकर सभी सदस्य महादेव (च्दो) के पास बैठकर पूरी रात जत्ती गाते है, नृत्य करते है। प्रातः काल ब्रह्म मुहूर्त में महादेव को जुलूस की शक्ल में पूर्ण भक्ति व श्रद्धा भाव से जत्ती गीतों के गायन के साथ घर से बाहर निकाला जाता है उसे बरामदे के कोने या उचित पवित्र स्थान पर बाँध दिया जाता है।

यदि शिवरात्री के दिन घर में बच्चा या गाय के बच्चा हो जाए तो उसे अत्यन्त शुभ व खुशहाली का प्रतीक माना जाता है और इस खुशी में तीन कुप्पुओं का एक छोटा सा च्दो तैयार किया जाता है और प्रत्येक वर्ष च्दो में एक कुप्पु की बढ़ौतरी होती रहती है। दुर्भाग्य से यदि इस दिन घर में किसी की मृत्यु हो जाए तो च्दो परिवार के सदस्यों द्वारा नही अपितु गांव के किसी व्यक्ति या धी–ध्याण (ब्याही हुई बेटी के पक्ष द्वारा) लगाया जाता है।

सन्दर्भ

- संगीत पत्रिका, जुलाई **1963,**
- डा॰ लक्ष्मी नारायण गर्ग, निबंध संगीत
- उमरेशचन्द्र चौबे, संगीत की संस्थागत संगीत शिक्षण प्रणाली, **1988,**
- किरण बाला–मध्ययुग में संगीतशास्त्रा के प्रमुख ग्रंथ,अप्रकाशित लघुशोध प्रबंध
- मांडवी सिंह, भारतीय संस्कृति कत्थक परम्परा,